रश्मिरथी

मुजफ्फरनगर, शामली, बुलन्दशहर, मथुरा, वाराणसी, चन्दौली, फतेहपुर, उन्नाव, देवरिया आदि जनपदों के लिए। नवसृजित जनपदों के विद्यार्थी अपने जनपद में निर्धारित खण्डकाव्य के सम्बन्ध में अपने विषय-अध्यापक से जानकारी प्राप्त कर लें।

प्रथम सर्ग : कर्ण का शौर्य-प्रदर्शन

प्रथम सर्ग के आरम्भ में कवि ने अग्नि के समान तेजस्वी एवं पवित्र पुरुषों की पृष्ठभूमि बनाकर कर्ण का परिचय दिया है। कर्ण की माता कुन्ती और पिता सूर्य थे। कर्ण कुन्ती के गर्भ से कौमार्यावस्था में उत्पन्न हुए थे, इसलिए कुन्ती ने लोकलाज के भय से उस नवजात शिशु को नदी में बहा दिया, जिसे एक निम्न जाति (सूत) के व्यक्ति ने पकड़ लिया और उसका पालन-पोषण किया। सूत के घर पलकर भी कर्ण शूरवीर, शीलवान, पुरुषार्थी और शस्त्र व शास्त्र-मर्मज्ञ बने। एक बार द्रोणाचार्य ने कौरव व पाण्डव राजकुमारों के शस्त्र-कौशल का सार्वजनिक प्रदर्शन किया। सभी लोग अर्जुन की बाण-विद्या पर मुग्ध हो गये, किन्तु तभी धनुष-बाण लिये कर्ण भी सभा में उपस्थित हो गया और उसने अर्जुन को द्वन्द्व-युद्ध के लिए चुनौती दी—

आँख खोलकर देख, कर्ण के हाथों का व्यापार।
फूले सस्ता सुयश प्राप्त कर, उस नर को धिक्कार॥

कर्ण की इस चुनौती से सम्पूर्ण सभा आश्चर्यचकित रह गयी, तभी कृपाचार्य ने उसका नाम, जाति और गोत्र पूछे। इस पर कर्ण ने अपने को सूत-पुत्र बतलाया। फिर कृपाचार्य ने कहा कि राजपुत्र अर्जुन से समता प्राप्त करने के लिए तुम्हें पहले कहीं का राज्य प्राप्त करना चाहिए। इस पर दुर्योधन ने कर्ण की वीरता से मुग्ध होकर, उसे अंगदेश का राजा बना दिया और अपना मुकुट उतारकर कर्ण के सिर पर रख दिया। इस उपकार के बदले भावविह्वल कर्ण सदैव के लिए दुर्योधन का मित्र बन गया। इधर कौरव कर्ण को ससम्मान अपने साथ ले जाते हैं और उधर कुन्ती भाग्य की दु:खद विडम्बना पर मन मसोसती लड़खड़ाती हुई अपने रथ के पास पहुँचती है।

द्वितीय सर्ग : आश्रमवास

द्वितीय सर्ग का आरम्भ परशुराम के आश्रम-वर्णन से होता है। पाण्डवों के विरोध के कारण द्रोणाचार्य ने जब कर्ण को अपना शिष्य नहीं बनाया तो कर्ण परशुराम के आश्रम में धनुर्विद्या सीखने के लिए जाता है। परशुराम क्षत्रियों को शिक्षा नहीं देते थे। कर्ण के कवच और कुण्डल देखकर परशुराम ने उसे ब्राह्मण कुमार समझा और अपना शिष्य बना लिया।

एक दिन परशुराम कर्ण की जंघा पर सिर रखकर सो रहे थे कि तभी एक विषैला कीट कर्ण की जंघा को काटने लगा। गुरु की निद्रा न खुल जाए, इस कारण कर्ण अपने स्थान से हिला तक नहीं। जंघा से बहते रक्त की धारा के स्पर्श से परशुराम की निद्रा टूट गयी। कर्ण की इस अद्‌भूत सहनशक्ति को देखकर परशुराम ने कहा कि ब्राह्मण में इतनी सहनशक्ति नहीं होती, इसलिए तू अवश्य ही क्षत्रिय या अन्य जाति का है। कर्ण स्वीकार कर लेता है कि मैं सूत-पुत्र हूँ। क्रुद्ध परशुराम ने उसे तुरन्त अपने आश्रम से चले जाने को कहा और शाप दिया कि मैंने तुझे जो ब्रह्मास्त्र विद्या सिखलायी है, तू अन्त समय में उसे भूल जाएगा—

सिखलाया ब्रह्मास्त्र तूझे जो, काम नहीं वह आएगा।
है यह मेरा शाप समय पर, उसे भूल तू जाएगा॥

कर्ण गुरु की चरणाधूलि लेकर आँसू-भरे नेत्रों से आश्रम छोड़कर चल देता है।

तृतीय सर्ग : कृष्ण सन्देश

कौरवों से द्यूत में हारने के कारण पाण्डवों को बारह वर्ष का वनवास तथा एक साल का अज्ञातवास भोगना पड़ा। तेरह वर्ष की यह अवधि व्यतीत कर पाण्डव अपने नगर इन्द्रप्रस्थ लौट आते हैं। पाण्डवों की ओर से श्रीकृष्ण कौरवों से सन्धि का प्रस्ताव लेकर हस्तिनापुर जाते हैं। श्रीकृष्ण ने कौरवों को बहुत समझाया, परन्तु दुर्योधन ने सन्धि-प्रस्ताव ठुकरा दिया तथा उल्टे श्रीकृष्ण को ही बन्दी बनाने का असफल प्रयास किया।

दुर्योधन के न मानने पर श्रीकृष्ण ने कर्ण को समझाया कि अब तो युद्ध निश्चित है, परन्तु उसे टालने का एकमात्र यही उपाय है कि तुम दुर्योधन का साथ छोड़ दो; क्योंकि तुम कुन्ती-पुत्र हो। अब तुम ही इस भारी विनाश को रोक सकते हो। इस पर कर्ण आहत होकर व्यंग्यपूर्वक पूछता है कि आप आज मुझे कुन्ती पुत्र बताते हैं। उस दिन क्यों नहीं कहा था, जब मैं जाति-गोत्रहीन सूत-पुत्र बना भरी सभा में अपमानित हुआ था। मुझे स्नेह और सम्मान तो दुर्योधन ने ही दिया था। मेरा तो रोम-रोम दुर्योधन का ऋणी है।

फिर भी आप मेरे जन्म का रहस्य युधिष्ठिर को मत बताइएगा; क्योंकि मेरे जन्म का रहस्य जानने पर वे ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण अपना राज्य मुझे दे देंगे और मैं वह राज्य दुर्योधन को दे डालूँगा—

धरती की तो है क्या बिसात? आ जाये अगर बैकुण्ठ हाथ।
उसको भी न्यौछावर कर दूँ, कुरुपति के चरणों पर धर दूँ॥

इतना कहकर और श्रीकृष्ण को प्रणाम कर कर्ण चला जाता है।

इस सर्ग की कथा से जहाँ हमें श्रीकृष्ण के महान कूटनीतिज्ञ और अलौकिक शक्तिसम्पन्न होने की विशिष्टता दृष्टिगोचर होती है वहीं कर्ण के अन्दर हमें सच्चे मित्र और मित्र के प्रति कृतज्ञ होने के गुण दिखाई पड़ते हैं।

पंचम सर्ग : माता की विनती

इस सर्ग का आरम्भ कुन्ती की चिन्ता से होता है। कुन्ती इस कारण चिन्तित है कि रण मे मेरे पुत्र कर्ण और अर्जुन परस्पर युद्ध करेंगे। कुन्ती व्याकुल हो कर्ण से मिलने जाती है। उस समय कर्ण सन्ध्या कर रहा था, आहट पाकर कर्ण का ध्यान टूट जाता है। उसने कुन्ती को प्रणाम कर उसका परिचय पूछा। कुन्ती ने बताया कि तू सूत-पुत्र नहीं मेरा पुत्र है। तेरा जन्म मेरी कोख से तब हुआ था, जब मैं अविवाहिता थी। मैंने लोक-लज्जा के भय से तुझे मंजूषा (पेटी) में रखकर नदी में बहा दिया था, परन्तु अब मैं यह सहन नहीं कर सकती कि मेरे ही पुत्र एक-दूसरे से युद्ध करें; अत: मैं तुझसे प्रार्थना करने आयी हूँ कि तुम अपने छोटे भ्राताओं के साथ मिलकर राज्य का भोग करो।

कर्ण ने कहा कि मुझे अपने जन्म के विषय में सब कुछ ज्ञात है, परन्तु मैं अपने मित्र दुर्योधन का साथ कभी नहीं छोड़ सकता। असहाय कुन्ती ने कहा कि तू सबको दान देता है, क्या अपनी माँ को भीख नहीं दे सकता? कर्ण ने कहा कि माँ! मैं तुम्हें एक नहीं चार पुत्र दान में देता हूँ। मैं अर्जुन को छोड़कर तुम्हारे किसी पुत्र को नहीं मारूँगा। यदि अर्जुन के हाथों में मारा गया तो तुम पाँच पुत्रों की माँ रहोगी ही, परन्तु यदि मैंने युद्ध में अर्जुन को मार दिया तो विजय दुर्योधन की होगी और मैं दुर्योधन का साथ छोड़कर तुम्हारे पास आ जाऊँगा। तब भी तुम पाँच पुत्रों की ही माँ रहोगी। कुन्ती निराश मन लौट आती है—

हो रहा मौन राधेय चरण को छूकर,
दो बिन्दु अश्रु के गिरे दृगों से चूकर।
बेटे का मस्तक सूँघ बड़े ही दुःख से,
कुन्ती लौटी कुछ कहे बिना ही मुख से॥

सप्तम सर्ग : कर्ण का बलिदान

'रश्मिरथी' का यह अन्तिम सर्ग है। कौरव सेनापति कर्ण ने पाण्डवों की सेना पर भीषण आक्रमण किया। कर्ण की गर्जना से पाण्डव सेना में भगदड़ मच जाती है। युधिष्ठिर युद्धभूमि से भागने लगते हैं तो कर्ण उन्हें पकड़ लेता है, किन्तु कुन्ती को दिये वचन का स्मरण कर युधिष्ठिर को छोड़ देता है। इसी प्रकार भीम, नकुल और सहदेव को भी पकड़-पकड़कर छोड़ देता है। कर्ण का सारथी शल्य उसके रथ को अर्जुन के रथ के निकट ले जाता है। कर्ण के भीषण बाण-प्रहार से अर्जुन मूर्च्छित हो जाता है। चेतना लौटने पर श्रीकृष्ण अर्जुन को पुनः कर्ण से युद्ध करने के लिए उत्तेजित करते हैं। दोनों ओर से घमासान युद्ध होता है। तभी कर्ण के रथ का पहिया रक्त के कीचड़ में फँस जाता है। कर्ण रथ से उतरकर पहिया निकालने लगता है। इसी समय श्रीकृष्ण अर्जुन को कर्ण पर बाण-प्रहार करने के लिए कहते हैं—

खड़ा है देखता क्या मौन भोले! शरासन तान, बस अवसर यही है,
घड़ी फिर और मिलने की नहीं है। विशिख कोई गले के पार कर दे,
अभी ही शत्रु का संहार कर दे।

कर्ण धर्म की दुहाई देता है तो श्रीकृष्ण उसे कौरवों के पूर्व कुकर्मों का स्मरण दिलाते हैं। इसी वार्त्तालाप में अवसर देखकर अर्जुन कर्ण पर प्रहार कर देता है और कर्ण की मृत्यु हो जाती है।

अन्त में युधिष्ठिर आदि सभी कर्ण की मृत्यु पर प्रसन्न हैं, किन्तु श्रीकृष्ण दुःखी हैं। वे युधिष्ठिर से कहते हैं कि विजय तो अवश्य मिली, पर मर्यादा खोकर। वास्तव में चरित्र की दृष्टि से तो कर्ण ही विजयी रहा। आप लोग कर्ण को भीष्म और

द्रोणाचार्य की भाँति ही सम्मान दीजिए। यहाँ पर इस खण्डकाव्य की कथा समाप्त हो जाती है।

कर्ण का चरित्र - चित्रण

'रश्मिरथी' कर्ण के चरित्र पर आधारित खण्डकाव्य है। कर्ण का चरित्र शील की प्रतिमूर्ति, शौर्य व पौरुष का अगाध सिन्धु, शक्ति का स्रोत, सत्य-साधना-दान-त्याग का तपोवन तथा आर्य-संस्कृति का आलोकमय तेज है। कर्ण के चरित्र की प्रमुख विशेषताएँ निम्नवत् हैं—

1. **उत्कृष्ट चरित्र**—कर्ण 'रश्मिरथी' का नायक है। काव्य की सम्पूर्ण कथा कर्ण के चारों ओर घूमती है। काव्य का नामकरण भी कर्ण को ही नायक सिद्ध करता है। 'रश्मिरथी' का अर्थ है—वह मनुष्य, जिसका रथ रश्मि अर्थात् पुण्य का हो। इस काव्य में कर्ण का चरित्र ही पुण्यतम है। कर्ण के आगे अन्य किसी पात्र का चरित्र नहीं ठहर पाता। कर्ण के सम्बन्ध में कवि के ये शब्द द्रष्टव्य हैं—

   तन से समरशूर, मन से भावुक, स्वभाव से दानी।
   जाति गोत्र का नहीं, शील का पौरुष का अभिमानी॥

2. **साहसी और वीर योद्धा**—इस खण्डकाव्य के आरम्भ में ही कर्ण हमें एक वीर योद्धा के रूप में दिखाई देता है। शस्त्र-विद्या-प्रदर्शन के समय वह प्रदर्शन-स्थल पर उपस्थित होकर अर्जुन को ललकारता है तो सब स्तब्ध रह जाते हैं। जब इस पर कृपाचार्य कर्ण से उसकी जाति-गोत्र आदि पूछते हैं तो कर्ण उनसे कहता है—

   पूछो मेरी जाति, शक्ति हो तो मेरे भुज बल से।
   रवि-समान दीप्ति ललाट से, और कवच कुण्डल से॥

3. **सच्चा मित्र**—दुर्योधन ने जाति-अपमान से कर्ण की रक्षा उसे राजा बनाकर की, तभी से कर्ण दुर्योधन का अभिन्न मित्र बन गया। कृष्ण और कुन्ती के समझाने पर भी वह दुर्योधन का साथ नहीं छोड़ता और अन्त समय तक अपनी मित्रता के प्रति पूर्ण समर्पित रहता है।

4. **सच्चा गुरुभक्त और विनयी**—कर्ण गुरु के प्रति परम विनयी एवं श्रद्धालु है। कीट कर्ण की जाँघ काटकर भीतर घुस जाता है, रक्त की धारा बहने लगती है, पर कर्ण पैर नहीं हिलाता; क्योंकि हिलने से उसकी जाँघ पर सिर रखकर सोये गुरु की नींद खुल जाएगी। आँखें खुलने पर वह गुरु को वास्तविकता बता देता है तो वे क्रोधित होकर उसे आश्रम से निकाल देते हैं, परन्तु कर्ण अपनी विनय नहीं छोड़ता और जाते समय भी गुरु की चरण-धूलि लेता है।

5. **परम दानवीर**—कर्ण के चरित्र की एक प्रमुख विशेषता यह है कि वह धन-सम्पत्ति की लिप्सा से मुक्त है। इसलिए प्रतिदिन प्रातःकाल सन्ध्या-वन्दन करने के बाद वह याचकों को दान देता है। ब्राह्मण-वेश में आये इन्द्र को वह अपने जीवन-रक्षक कवच और कुण्डल तक दान में दे देता है। अपनी माता कुन्ती को युधिष्ठिर, भीम, नकुल और सहदेव को न मारने का अभयदान देता है। कर्ण की दानशीलता के सम्बन्ध में कवि कहता है—

रवि-पूजन के समय सामने, जो भी याचक आता था।
मुँह माँगा वह दान कर्ण से, अनायास ही पाता था॥

6. **महान सेनानी**—कौरवों की ओर से कर्ण महाभारत के युद्ध में सेनापति है। वह शर-शय्या पर लेटे भीष्म पितामह से युद्ध हेतु आशीर्वाद लेने जाता है। भीष्म उसके विषय में कहते हैं—

अर्जुन को मिले कृष्ण जैसे। तुम मिले कौरवों को वैसे॥

युद्ध में कर्ण ने अपने रण-कौशल से पाण्डवों की सेना में हा-हाकार मचा दिया। उसकी वीरता की प्रशंसा श्रीकृष्ण भी करते हैं।

7. **अन्य विशेषताएँ**—श्रीकृष्ण का युधिष्ठिर से कहा गया निम्नलिखित कथन कर्ण की चारित्रिक श्रेष्ठता की पुष्टि करता है—

हृदय का निष्कपट, पावन क्रिया का, दलित हारक, समुद्धारक त्रिया का।

बड़ा बेजोड़ दानी था, सदय था,
युधिष्ठिर! कर्ण का अद्भुत हृदय था॥

इस प्रकार हम पाते हैं कि कवि का मुख्य मन्तव्य कर्ण के चरित्र के शीलपक्ष, मैत्रीभाव एवं शौर्य का चित्रण करना रहा है, जिसके लिए उसने कर्ण को राज्य और विजय की गलत महत्त्वाकांक्षाओं से पीड़ित न दिखाकर षड्यन्त्रों, परीक्षाओं और प्रलोभनों की स्थितियों में उसे अडिग चित्रित किया है। यही स्थिति उसको खण्डकाव्य का महान नायक बना देती है।

कृष्ण का चरित्र-चित्रण

रश्मिरथी' खण्डकाव्य में श्रीकृष्ण के चरित्र की निम्नलिखित विशेषताएँ दिखाई देती हैं—

1. **युद्ध-विरोधी**—पाण्डवों के वनवास से लौटने के बाद श्रीकृष्ण कौरवों को समझाने के लिए स्वयं हस्तिनापुर जाते हैं और युद्ध टालने का भरसक प्रयास करते हैं, किन्तु हठी दुर्योधन नहीं मानता। इसके बाद वे कर्ण को भी समझाते हैं, परन्तु कर्ण भी अपने प्रण से नहीं हटता। अन्त में श्रीकृष्ण कहते हैं—

   यश मुकुट मान सिंहासन ले, बस एक भीख मुझको दे दे।
   कौरव को तज रण रोक सखे, भू का हर भावी शोक सखे॥

2. **निर्भीक एवं स्पष्टवादी**—श्रीकृष्ण केवल अनुनय-विनय ही करना नहीं जानते, वरन् वे निर्भीक एवं स्पष्ट वक्ता भी हैं। जब दुर्योधन समझाने से नहीं मानता तो वे उसे चेतावनी देते हुए कहते हैं—

   तो ले मैं भी अब जाता हूँ, अन्तिम संकल्प सुनाता हूँ।
   याचना नहीं अब रण होगा, जीवन-जय या कि मरण होगा।

3. **शीलवान व व्यावहारिक**—श्रीकृष्ण के सभी कार्य उनके शील के परिचायक हैं। वास्तव में वे एक सदाचारपूर्ण समाज की स्थापना करना चाहते हैं। वे शील को ही जीवन का सार मानते हैं—

   नहीं पुरुषार्थ केवल जाति में है, विभा का सार शील पुनीत में है।

   साथ ही वह सांसारिक सिद्धि और सफलता के सभी सूत्रों से भी अवगत हैं।

4. **गुणों के प्रशंसक**—श्रीकृष्ण अपने विरोधी के गुणों का भी आदर करते हैं। कर्ण उनके विरुद्ध लड़ता है, परन्तु श्रीकृष्ण कर्ण का गुणगान करते नहीं थकते—

..... वीर शत बार धन्य, तुझ-सा न मित्र कोई अनन्य।

5. **महान् कूटनीतिज्ञ**—श्रीकृष्ण महान् कूटनीतिज्ञ हैं। पाण्डवों की विजय श्रीकृष्ण की कूटनीति के कारण ही हुई। वे पाण्डवों की ओर के कूटनीतिज्ञ का कार्य कर दुर्योधन की बड़ी शक्ति कर्ण को उससे अलग करने का प्रयत्न करते हैं। उनकी कूटनीतिज्ञता का प्रमाण कर्ण से कहा गया उनका यह कथन है—

कुन्ती का तू ही तनय श्रेष्ठ, बलशील में परम श्रेष्ठ।
मस्तक पर मुकुट धरेंगे हम, तेरा अभिषेक करेंगे हम॥

6. **अलौकिक शक्तिसम्पन्न**—कवि ने श्रीकृष्ण के चरित्र में जहाँ मानव-स्वभाव के अनुरूप अनेक साधारण विशेषताओं का समावेश किया है, वहीं उन्हें अलौकिक शक्ति-सम्पन्न रूप देकर लीलापुरुष भी सिद्ध किया है। जब दुर्योधन उन्हें कैद करना चाहता है, तब वे अपने विराट स्वरूप में प्रकट हो जाते हैं—

हरि ने भीषण हुंकार किया, अपना स्वरूप विस्तार किया।
डगमग डगमग दिग्गज डोले, भगवान् कुपित होकर बोले-
"जंजीर बढ़ाकर साध मुझे, हाँ हाँ दुर्योधन बाँध मुझे।"

इस प्रकार इस खण्डकाव्य में श्रीकृष्ण को श्रेष्ठ कूटनीतिज्ञ, किन्तु महान् लोकोपकारक के रूप में चित्रित करके कवि ने उनके पौराणिक चरित्र को

युगानुरूप बनाकर प्रस्तुत किया है। कवि के इस प्रस्तुतीकरण की विशेषता यह है कि इससे कहीं भी उनके पौराणिक स्वरूप को क्षति नहीं पहुँची है। कृष्ण का यह व्यक्तित्व कवि की कविता में युगानसार प्रकट हआ है।

कुंती का चरित्र-चित्रण

कुन्ती पाण्डवों की माता है। अविवाहिता कुन्ती के गर्भ से सूर्य-पुत्र कर्ण का जन्म हुआ था। इस प्रकार कुन्ती के पाँच नहीं वरन् छः पुत्र थे। कुन्ती की चारित्रिक विशेषताएँ निम्नवत् हैं—

1. **वात्सल्यमयी माता**—कुन्ती को जब यह ज्ञात होता है कि कर्ण का उसके अन्य पाँच पुत्रों से युद्ध होने वाला है तो वह कर्ण को मनाने उसके पास पहुँच जाती है। उस समय कर्ण सूर्य की उपासना कर रहा था। अपने पुत्र कर्ण के तेजोमय रूप को देख कुन्ती फूली नहीं समाती। सन्ध्या से आँखें खोलने पर कर्ण स्वयं को राधा का पुत्र बताता है तो कुन्ती यह सुनकर व्याकुल हो जाती है—

रे कर्ण! बेध मत मुझे निदारुण शर से।
राधा का सुत तू नहीं, तनय मेरा है॥

कर्ण के पास से निराश लौटती हुई कुन्ती कर्ण को अपने अंक में भर लेती है, जो उसके वात्सल्य का प्रमाण है।

2. **अन्तर्द्वन्द्व ग्रस्त**—जब कुन्ती के ही पुत्र परस्पर शत्रु बने खड़े हैं, तब कुन्ती के हृदय में अन्तर्द्वन्द्व को भीषण आँधी उठ रही थी। वह इस समय बड़ी ही उलझन में पड़ी हुई है। पाँचों पाण्डवों और कर्ण में से किसी की हानि हो, पर वह हानि तो कुन्ती की ही होगी। वह अपने पुत्रों का सुख-दुःख अपना सुख-दुःख समझती है—

दो में किसका उर फटे, फटूँगी मैं ही।
जिसकी भी गर्दन कटे, कटूँगी मैं ही॥

3. **समाज-भीरु**—कुन्ती लोक-लाज से बहुत अधिक भयभीत एक भारतीय नारी की प्रतीक है। कौमार्यावस्था में सूर्य से उत्पन्न नवजात शिशु (कर्ण) को वह लोक-निन्दा के भय से गंगा की लहरों में बहा देती है। इस बात को वह कर्ण के समक्ष भी स्वीकार करती है—

मंजूषा में धर वज्र कर मन को,
धारा में आयी छोड़ हृदय के धन को।

कर्ण को युवा और वीरत्व की प्रतिमूर्ति बने देखकर भी अपना पुत्र कहने का साहस नहीं कर पाती। जब युद्ध की विभीषिका सम्मुख आ जाती है, तो वह कर्ण से अपनी दयनीय स्थिति को निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त करती है—

बेटा धरती पर बड़ी दीन है नारी,
अबला होती, सचमुच योषिता कुमारी।
है कठिन बन्द करना समाज के मुख को,
सिर उठा न पा सकती पतिता निज सुख को।

4. **निश्छल**—कुन्ती का हृदय छलरहित है। वह कर्ण के पास मन में कोई छल रखकर नहीं, वरन् निष्कपट भाव से गयी थी। यद्यपि कर्ण उसकी बातें स्वीकार नहीं करता, किन्तु कुन्ती उसके प्रति अपना ममत्व कम नहीं करती।

5. **बुद्धिमती और वाक्पटु**—कुन्ती एक बुद्धिमती नारी है। वह अवसर को पहचानने तथा दूरगामी परिणाम का अनुमान करने में समर्थ है। कर्ण-अर्जुन युद्ध का निश्चय जानकर वह समुचित कदम उठाती है—

सोचा कि आज भी चूक अगर जाऊँगी,
भीषण अनर्थ फिर रोक नहीं पाऊँगी।
फिर भी तू जीता रहे, न अपयश जाने,
अब आ क्षणभर मैं तुझे अंक में भर लूँ।।